जेंडर स्तरीकरण और असमानताएँ*

जेंडर स्तरीकरण का इतिहास

आज की दुनिया की तरह ही ऐतिहासिक रूप से भी विभिन्न समाजों में और खुद एक समाज के भीतर भी जेंडर से सम्बन्धित भूमिकाओं और जेंडर असमानता का स्वरूप काफी विविध प्रकार का रहा है। औरत-मर्द की अहमियत और हैसियत काफी हद तक रोटी, कपड़ा और मकान जैसी जरूरतों को पूरा करने में उनके सापेक्ष योगदान (वास्तविक या कथित) से तय होती रही है। जैसा कि अध्याय 3 में जिक्र किया गया था तकरीबन 10000 साल पहले नवपाषाण क्रान्ति के पहले शिकारी और संग्राहक कबीलों में स्त्री-पुरुष असमानता का स्तर इस बात पर निर्भर करता था कि आखेट और संग्रहण की गतिविधियों का अनुपात क्या है। शिकारी कबीलों में मुख्यतः शारीरिक वजहों से आमतौर पर पुरुषों का दबदबा ज्यादा होता था। जो कबीले शिकार पर कम निर्भर थे (ज्यादातर कबीले इसी तरह के थे) उनके भीतर पुरुषों और स्त्रियों के बीच ज्यादा समानता होती थी। इस नियम का कम से कम एक अपवाद मिलता है, एक ऐसा अपवाद जो इस नियम के लिए मुफीद है। डोबी कुंग शिकारी कबीलों में यह विश्वास प्रचलित है कि भोजन घर लाने में, तीर बनाने का कौशल सबसे ज्यादा महत्त्व रखता है। पुरुष शिकार करते हैं मगर तीर औरत और मर्द, दोनों ही बनाते हैं और सम्भवत: दोनों के पास तीर बनाने का एक जैसा कौशल है, क्योंकि यहाँ पुरुष-महिला असमानता का स्तर उन कबीलों के ज्यादा निकट है, जो भोजन के लिए मुख्य रूप से संग्रहण पर निर्भर रहते थे (Lee 1985)।

तकरीबन 10000 साल पहले मनुष्यों ने शिकार और कन्दमूल बटोरने की बजाय सरल बागवानी अपनाना शुरू किया। इस बदलाव के साथ ही पुरुष-महिला असमानता का स्तर बढ़ने लगा, हालाँकि वास्तविक रूप से इस असमानता में काफी विविधता और पेचीदगियाँ थीं। मिसाल के लिए, कुछ समाजों में औरतें खाद्य-सामग्री इकट्ठा करने के साथ-साथ शिकार पर भी जाया करती थीं। कई मौजूदा कबीलों पर किए गए मानवशास्त्रीय शोधों से पता चलता है कि कुछ प्रसंगों में सरल बागवानी के साथ-साथ आखेट और इकट्ठा करने सम्बन्धी गतिविधियों का सहअस्तित्व बना रहा

---

* स्रोत : Kerbo, Harold R, "Chapter 10: Gender Stratification and Inequalities", *Social Stratification and Inequality: Class Conflict in Historical, Comparative, and Global Perspective,* 5th Edition, McGraw-Hill, Boston, 2003.)

है। मिसाल के तौर पर, फिलीपींस के आगता समुदाय में बहुत सारी औरतें चीजों की खरीद-बिक्री, मछली पकड़ने और जंगलों से खाद्य पदार्थ इकट्ठा करने के साथ-साथ शिकार भी करती हैं (Estioko-Griffin & Griffin 1981)। कुछ मामलों में महिलाएँ तीर-कमान से जानवरों का शिकार करती हैं और खेतों में अनाज भी उगाती है। ऐसे कबीलों में काफी जेंडर समानता है और महिलाओं को उत्पादन कार्यों के साथ-साथ विवाह और पारिवारिक सम्बन्धों जैसे सवालों पर भी निर्णय लेने के लिए समान अधिकार मिला हुआ है। दक्षिण प्रशान्त क्षेत्र के वनतिनाइ समुदायों में उल्लेखनीय जेंडर समानता तो है ही, साथ ही पुरुषों और महिलाओं की गतिविधियाँ लगातार अदलती-बदलती रहती हैं और कई बार एक जैसी रहती हैं (Lepowsky, 1993)। ज्यादातर काम शिकार और बागवानी से जुड़े हैं। महिलाएँ मुख्य रूप से पौधों की रोपाई और देखभाल का जिम्मा सम्भालती हैं जबकि पुरुष खर-पतवार की छँटाई और फसलों की कटाई करते हैं। मगर महिलाएँ और पुरुष, दोनों ही भोजन इकट्ठा करते हैं, शिकार के लिए जाते हैं और दोनों ही व्यक्तिगत रुचियों और सामर्थ्य के आधार पर वस्तुओं के लेन-देन जैसी हैसियत बढ़ाने वाली गतिविधियों में हिस्सा लेते हैं।

बहुत सारे अर्धघुमन्तू, रेवड़ चराने वाले समुदायों में बुनियादी आर्थिक जिम्मेदारियाँ पुरुष सम्भालते हैं हालाँकि महिलाएँ भी कुछ खेती करती हैं। इन कबीलों में महिलाओं व पुरुषों की भूमिकाओं और हैसियत में अदला-बदली भी होती रहती है (Rasmussen 2011)। ये चीजें काफी हद तक किसी कबीले की स्थानीय संस्कृति और इतिहास पर निर्भर करती हैं। अफ़्रीकी सहारा और साहेल के इलाके में त्वारेग नामक एक अर्धघुमन्तू कबीला, नाइजर, माली, बुरकिना फासो और अल्जीरिया में फैला हुआ है। इस कबीले की औरतों को काफी सुविधाएँ और अधिकार मिले हुए हैं। सार्वजनिक स्तर पर महिलाओं ओर पुरुषों के बीच कोई खास भेद नहीं है। हालाँकि त्वारेग कबीले के जो समूह ज्यादा घुमन्तू हैं और आधिकारिक इस्लामिक तौर-तरीकों को ज्यादा नहीं मानते, उनमें ज्यादा जेंडर समानता दिखाई देती है और पुरुषों व महिलाओं के सम्बन्धों और भूमिकाओं में ज्यादा लचीलापन है। अच्छे-खासे इस्लामिक प्रभाव के बावजूद महिलाओं को न तो पर्दे में रहना पड़ता है और ना ही उन्हें घरों के भीतर बन्द किया जाता है। उनके पास सम्पत्ति के अधिकार भी बने रहते हैं।

ज्यादा गतिहीन जीवनशैली और आधुनिक राष्ट्र-राज्य व शहरीकरण की ओर संक्रमण से महिलाओं की हैसियत और स्वायत्तता में लगातार कटौती होती जा रही है। हालाँकि ग्रामीण इलाकों की महिलाओं को रोजी-रोटी के लिए काफी काम करना पड़ता है इसलिए उनके पास फिर भी काफी आजादी और स्वायत्तता बची रहती है। हालाँकि बहुत सारे देशों में आए आर्थिक संकटों से गुजर-बसर और जेंडर समानता, दोनों के लिए अच्छा-खासा खतरा पैदा हुआ है। कुछ मानवशास्त्रियों का विश्वास है कि साधारण बागवानी की तरफ सबसे पहला कदम औरतों ने ही उठाया था। इसके

बावजूद, हमें यह भी समझना चाहिए कि दुनिया भर के कृषि समाजों और पूर्व-औद्योगिक समाजों में भी काफी आन्तरिक विभिन्नताएँ रही हैं। उदाहरण के लिए, जेंडर सम्बन्धों पर अपनी शुरुआती टिप्पणियों में हमने थाईलैण्ड में तुलनात्मक रूप से बेहतर जेंडर समानता की चर्चा की थी। सम्भवतः आबोहवा, ज्यादा बेहतर जमीन-जनसंख्या अनुपात और सदियों तक कोई बड़ा युद्ध न होने की वजह से थाईलैण्ड में पुरुषों का उतना दबदबा नहीं रहा है और यहाँ परिवारिक वंशानुक्रम (बल्कि कुछ हद तक मातृवंशीय परिवारिक वंशानुक्रम) की दोतरफा प्रणाली अस्तित्व में रही है। थाईलैण्ड के बहुत सारे भागों और आमतौर पर दक्षिण पूर्व एशिया के कई इलाकों में परम्परागत रूप से जमीन बेटियों के नाम पर होती है और पति अपनी पत्नी के परिवार में जाकर रहने लगता है और उसकी जमीन पर खेती करने लगता है इसलिए आज भी इन समाजों में औरतों को उच्चत्तर हैसियत मिली हुई है। (Slagter and Kerbo,2000; Pasuk and Baker1998)।

जेंडर से सम्बन्धित भूमिकाओं और हैसियत में कुछ विभिन्नता महिलाओं के द्वारा किए जाने वाले कामों के स्वरूप से भी जुड़ी है। उदाहरण के लिए, भारत में पुरुष और महिलाएँ, दोनों ही खेती से सम्बन्धित काम करते हैं, खासतौर से छोटी पारिवारिक जोतों में। मगर महिलाओं का ज्यादातर काम, जैसे दुधारू मवेशियों को सम्भालना, बाहर के लोगों को दिखाई नहीं देता है, खासतौर से उत्तर भारत के गेहूँ उत्पादक इलाकों में। इसके विपरीत, जैसे-जैसे हम दक्षिण व पूर्व की ओर बढ़ते हैं, जहाँ चावल की खेती अधिक होती है, मध्यम और निम्नस्तर हैसियत वाले परिवारों में महिलाएँ खुले खेत में मजदूरी करती हुई देखी जा सकती हैं (Sekhon 2000)। इससे औरतों को थोड़ी और स्वायत्तता व लचीलापन मिल जाता है। औपनिवेशिक और पूर्व-औद्योगिक अमरीका में भी महिलाएँ कई तरह के उत्पादक कार्य करती थीं और महिलाओं व पुरुषों का श्रम एक दूसरे पर आश्रित होता था। मगर ज्यादातर पूर्व-औद्योगिक समाजों में पुरुषों को राजनीतिक व्यवस्था और युद्धों से ताकत मिलती रही है।

प्रारम्भिक उद्योगीकरण के चलते महिलाओं की स्थिति/हैसियत आमतौर पर और खराब हुई। एक औसत औरत के लिए पुरुषों की तुलना में जीवन-स्तर या हैसियत और अधिकार सम्पन्नता के मामले में प्राय: कोई सुधार नहीं आया। प्रारम्भिक उद्योगीकरण ने लोगों को गाँव से बड़े शहरों की तरफ पलायन के लिए विवश किया। इस प्रक्रिया में ज्यादातर परिवार छिन्न-भिन्न हो गए। किसी-किसी समय में औरतों के पास भीख माँगने, वेश्यावृत्ति करने या कारखानों में तनख्वाह वाली नौकरियों के अलावा कोई चारा न रहा। हाल के आनुभविक साक्ष्यों से पता चलता है कि कारखानों में कम मजदूरी वाली नौकरियों में औरतों और छोटे बच्चों की संख्या उतनी नहीं थी जितनी पहले सोची जाती थी। फिर भी, उद्योगीकरण के शुरुआती दौर में ग्रामीण आप्रवासी और नए मजदूर वर्ग

की महिलाओं व बच्चों की काफी माँग रहती थी क्योंकि उनको ज्यादा आसानी से काबू किया जा सकता था और उनसे न तो कम मजदूरी के खिलाफ हड़ताल का डर था और न ही काम करने की खराब परिस्थितियों के खिलाफ किसी हंगामे का। इरविंग होवे (1976) ने न्यूयॉर्क सिटी में कपड़ा उद्योग में आप्रवासी महिलाओं की कार्य-परिस्थितियों का जो ब्यौरा दिया है वह सिर्फ इसी इलाके की खासियत नहीं था। महिलाओं और बच्चों से भीड़-भाड़ भरे, खतरनाक एवं घुटनभरे कार्यस्थलों में हफ्ता-दर-हफ्ता, बहुत लम्बी पालियों में काम कराया जाता था। न तो उन्हें काम से छुट्टी मिलती थी और न ही उनके पास साँस लेने के लिए साफ हवा या साफ-सुथरे विश्राम कक्ष होते थे। असुरक्षित कार्य परिस्थितियों में बहुत सारी मजदूर महिलाएँ जख्मी हो जाती थीं और न जाने कितनी मारी गईं। मिसाल के तौर पर, न्यूयार्क सिटी स्थित ट्राएंगल शर्ट फैक्ट्री में 1911 में जो आग लगी थी उसमें महज कुछ मिनटों के भीतर 146 मजदूर युवतियाँ मौत के मुँह में चली गई थीं। इसी तरह के हालात तेजी से उद्योगीकरण की राह पर चल रहे आज के ज्यादातर देशों में बने हुए हैं। यहाँ तक कि थाईलैण्ड में, जहाँ औरतों की हैसियत आमतौर पर अच्छी रही है, बहुत गरीब किसान लड़कियाँ, खासतौर से उत्तर-पूर्वी थाईलैण्ड से, बड़ी संख्या में बैंकॉक आ रही हैं और महज चन्द पैसों की मजदूरी देकर उनका शोषण किया जा रहा है। ट्रायंगल शर्ट फैक्ट्री जैसी घटनाओं की पुनरावृत्ति भी हुई। 1993 में बैंकाक की गुड़िया फैक्ट्री में आग लगने से बहुत सारी मजदूर युवतियाँ मारी गई थीं। और जैसा कि पीछे जिक्र किया गया था, दुनिया भर की फैक्ट्रियों में औरतों का काम अकसर बहुत खराब और असुरक्षित कार्य-परिस्थितियों में होता है और मजदूर महिलाएँ बहुत शक्तिहीन स्थिति में रहती हैं।

हालाँकि उन्नत औद्योगिक समाजों में हमें औरतों की हैसियत में बदलाव दिखाई देता है। लेकिन अभी भी पुरुषों और महिलाओं की असमानता के बहुत सारे रूप कायम हैं और जैसा कि हम देख चुके हैं, अभी भी उन्नत औद्योगिक समाजों में काफी विविधताएँ है। इसके बावजूद, उन्नत औद्योगिक समाजों में जेंडर असमानताएँ पूर्व-औद्योगिक समाजों के मुकाबले कम ही हैं। यहाँ कुछ ऐसे उदाहरण लिए जा सकते हैं जो आज की औरतों की जिन्दगी का आम हिस्सा बन गए हैं परन्तु कुछ पीढ़ी पहले ही पहले की औरतों के लिए सामान्य नहीं थे। मिसाल के तौर पर, आज सभी उन्नत औद्योगिक समाजों में महिलाओं को वोट देने का और चुने जाने का अधिकार है; मजदूर कानूनों से कार्यस्थल पर मजदूर महिलाओं के हालात सुधरे हैं; अब औरतों को वित्तीय संस्थानों से ऋण मिल सकते हैं; तलाक के मुकदमों में औरतों के पास पहले से ज्यादा अधिकार हैं और कानून व्यवस्था में उनका कद पहले से मजबूत है; महिलाएँ अब सिर्फ कुछ नौकरियों तक सीमित नहीं हैं, हालाँकि बहुत सारी नौकरियों में उनकी संख्या अब भी कम है। इन सारी बातों को दोहराने का

मकसद यह दिखाना नहीं है कि औरत और मर्द के बीच नाममात्र की असमानता बची है या यह कि हम अब समानता के आदर्श के निकट पहुँच रहे हैं। हमारा मकसद तो जेंडर असमानता को एक ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य में प्रस्तुत करना और जो बदलाव आए हैं उनको रेखांकित करना भर है।

महिलाओं की स्थिति में आए सुधार के लिए महिलाओं और पुरुषों की सोच में आए बदलाव को मुख्य कारण बताया जाता है। उदाहरण के लिए, 1938 में अमरीका के केवल 20% लोग शादीशुदा औरतों के घर से बाहर जाकर काम करने को सही मानते थे जबकि 80 के दशक में ऐसे लोगों की संख्या लगभग 80% पहुँच चुकी थी। सोच में आए इस बदलाव के पीछे कई घटनाक्रमों का हाथ है। हमें इस बात को समझना चाहिए कि किसी भी अल्पसंख्यक समूह की तरह महिलाओं की हैसियत में सुधार भी किसी समाज के मूलभूत स्वरूप में आए अन्तर्निहित बदलाव का ही परिणाम है। जैसा कि हमने मानव समाजों में असमानता के सामान्य इतिहास में देखा है, सुधार सिर्फ इसलिए नहीं आते हैं कि प्रभुत्वशाली समूहों का अचानक हृदय परिवर्तन हो जाता है। उन्नत औद्योगिक देशों में महिलाओं की स्थिति में जो सुधार आए हैं और जो सुधार आने बाकी हैं उनका सम्बन्ध मूलभूत आर्थिक व राजनीतिक परिवर्तनों और महिला आन्दोलनों के द्वारा किए गए प्रयासों से है।

जिन आर्थिक बदलावों से महिलाओं की स्थिति में सुधार आया है उनमें से कुछ जगजाहिर रहे हैं। मुमकिन है कि भारी शारीरिक श्रम की आवश्यकता वाली नौकरियों में महिलाएँ पुरुषों से मुकाबला न कर पाएँ, हालाँकि इस मामले में भी अभी तक महिलाओं की सामर्थ्य को बहुत कम करके आँका जाता रहा है। अब जबकि ज्यादातर नौकरियों में दिमागी सामर्थ्य और लोगों को सम्भालने की क्षमता ज्यादा महत्त्वपूर्ण है तो अगर जेंडर विभाजनों को हटा दिया जाए तो महिलाएँ और भी ज्यादा लाभ की स्थिति में पहुँच जाती हैं। सबसे महत्त्वपूर्ण बात यह है कि अब महिलाएँ अब महिलाएँ विज्ञान और प्रबन्धन में ऊँची हैसियत वाली नौकरियों के लिए पुरुषों के मुक़ाबले अयोग्य और अकुशल नहीं रह गई हैं।

जब औरतों के लिए आर्थिक अवसर बढ़ने लगते हैं तो थोड़े अस्पष्ट बदलाव भी आने लगते हैं। इसमें से एक बेहद महत्त्वपूर्ण बदलाव महिलाओं की सामान्य निर्भरता से सम्बन्धित है। अतीत में महिलाएँ आर्थिक सुरक्षा के लिए प्राय: पुरुषों पर निर्भर रहती थीं। जब वे अपने बूते पर श्रम शक्ति का हिस्सा बनने लगीं तो उन्हें बहुत महत्त्वपूर्ण आजादी और नए विकल्प मिले। अगर जरूरत पड़े और महिलाएँ चाहें तो अब वे पुरुषों से स्वतन्त्र रहकर जी सकती हैं। इससे समय के साथ पुरुषों की सोच और व्यवहार में भी बदलाव होते हैं। एक और नजरन्दाज कर दिया गया तकनीकी बदलाव उन्नत औद्योगिक समाजों के भीतर प्रजनन-नियन्त्रण के क्षेत्र में महिलाओं की बेहतर स्थिति से

जुड़ा हुआ है। पुरानी पीढ़ियों में आमतौर पर औरतों के पास अधेड़ उम्र में भी बच्चों की देखभाल का जिम्मा रहता था और वे आज के समाज के मुकाबले में कहीं ज्यादा बच्चों को जन्म देती थीं। हालाँकि इसमें से ज्यादातर बच्चे बालिग होने से पहले ही मर जाते थे। मगर उनकी मौजूदगी की वजह से औरतों के पास मजदूरी करने की आजादी नहीं रहती थी भले ही उनके लिए नौकरियाँ मौजूद रही हों। संक्षेप में, मसला यह है कि जन्म-नियन्त्रण की तकनीक आने से अब बच्चों की संख्या को नियन्त्रित किया जा सकता है, जिससे महिलाएँ शैक्षिक एवं व्यावसायिक सफलता पर और ज्यादा ध्यान दे सकती हैं।

पुनः इसमें से किसी भी तर्क का मकसद यह साबित करना नहीं है कि अब जेंडर असमानता खत्म हो गई है। हम हद से हद सिर्फ यही कह सकते हैं कि पुरुषों की तुलना में महिलाओं की हैसियत विभिन्न समाजों में अलग अलग रहती है। ये विभिन्नताएँ वर्ग-भेद, नस्लीय, नृजातीय विविधताओं, औद्योगिक व तकनीकी विकास के भिन्न स्तरों जैसे कारकों और बहुत सारे समाजों में विभिन्न व्यवसायिक-व्यापारिक एवं औद्योगिक उत्पादन के साथ-साथ जीवन-निर्वाह और अर्ध जीवन-निर्वाह स्तर की अर्थव्यवस्थाओं के सह अस्तित्व से सम्बन्धित हैं। फिर भी, यह जरूरी है कि हम इस बात को समझें कि हम कहाँ से आए हैं, हम किस तरफ जा रहे हैं, और जेंडर असमानता क्यों पैदा हुई और फली-फूली है।

जेंडर स्तरीकरण के सिद्धान्त

जेंडर असमानता के सिद्धान्तों पर कुछ हद तक विस्तार से बात करना जरूरी है क्योंकि वे न केवल उन असमानताओं के कारणों की व्याख्या में मदद करते हैं जिनका हमने पीछे जिक्र किया था बल्कि वे ज्यादा समतापरक जेंडर सम्बन्धों का नजरिया भी प्रस्तुत करते हैं। इन सिद्धान्तों से अमरीका और अन्य क्षेत्रों में महिलाओं के आन्दोलनों के कुछ मुख्य आयामों पर सोच-विचार का खाका मिलता है।

जैसा कि अगले अध्याय में हम नस्लीय और नृजातीय असमानताओं के विषय में देखेंगे, जेंडर असमानता और जेंडर भेद के विषय में भी बहुत किस्म के सिद्धान्त मौजूद हैं। बल्कि हाल के सालों में नारीवादी समाजशास्त्र और नारीवादी सिद्धान्त पर नए शोधों में वास्तविक विस्फोट की स्थिति दिखाई देती है (देखें, उदाहरण के लिए Chafetz 1988, 1990; Nielsen 1990; Connell 1987)। यहाँ हम इनमें से केवल कुछ सिद्धान्तों पर विचार करेंगे और खासतौर से उन सिद्धान्तों पर जिनको सबसे ज्यादा मान्यता मिली है और जो इस किताब में दिए गए सैद्धान्तिक खाके से

संगति रखते हैं। इस विषय में हमारा काम पहले ही आसान हो चुका है क्योंकि ज्यादातर मान्य सिद्धान्तों और इस किताब की सैद्धान्तिक समझ से संगति रखने वाले सिद्धान्तों में काफी निकटता है। तो आइए पहले संक्षेप में इन सिद्धान्तों की विविधता पर विचार कर लें।

लेंगरमान (Lengermann) और नाइबुर्ग-ब्रेंटली (Niebrugge-Brantley, 1992) तथा एंडरसन (Anderson, 1997; 317 से 381) ने जेंडर असमानता के सिद्धान्तों को तीन श्रेणियों में रखा है : भिन्नता के सिद्धान्त, असमानता के सिद्धान्त और उत्पीड़न के सिद्धान्त। पहली श्रेणी में वे सिद्धान्त आते हैं जो इस बात पर जोर देते हैं कि ज्यादातर परिस्थितियों में महिलाओं की अवस्थिति और उनके अनुभव वैसी ही परिस्थिति में पुरुषों को मिलने वाली अवस्थिति और अनुभव से भिन्न होते हैं।

इन सिद्धान्तों की जैव-सामाजिक, संस्थागत या समाज-मनोवैज्ञानिक व्याख्याएँ हो सकती हैं। असमानता के सिद्धान्त इस बात पर जोर देते हैं कि ज्यादातर परिस्थितियों में महिलाओं की अवस्थिति पुरुषों से भिन्न ही नहीं बल्कि असमान या कमतर ही होती है। जैसा कि हम आगे देखेंगे, इन सिद्धान्तों में असमानता की उदारवादी-नारीवाद व्यख्याओं से लेकर मार्क्सवादी तक, कई तरह की व्याख्याएँ निहित हैं। अन्त में, उत्पीड़न के सिद्धान्त इस बात पर जोर देते हैं कि महिलाएँ उत्पीड़ित हैं। वे पुरुषों के मुकाबले न केवल भिन्न या कमतर स्थिति में है बल्कि, उनको जानबूझकर अधीनस्थ स्थिति में रखा जाता है, उनको अधीनता के साँचे में ढाला जाता है और पुरुषों द्वारा उनका इस्तेमाल और शोषण किया जाता है (*Lengermann* and Niebrugge-Brantley 1992;458)। उत्पीड़न के इन सिद्धान्तों में मनोविश्लेषणात्मक से लेकर आमूल परिवर्तनवादी नारीवादी/समाजवादी सिद्धान्त और 'तीसरी लहर के नारीवादी सिद्धान्त' तक शामिल हैं। जैसा कि नाम से ही पता चल जाता है हमारी विषयवस्तु के लिए दूसरी श्रेणी के सिद्धान्त सबसे उपयोगी होंगे। मगर दूसरे सिद्धान्त जैसे जेंडर उत्पीड़न श्रेणी के सिद्धान्त, जो कि ज्यादा प्रत्यक्ष राजनीतिक रुझान रखते हैं और जेंडर असमानताओं को बनाए रखने की कोशिशों को सामने लाते हैं, उनसे यह समझने में निश्चय ही मदद मिलेगी कि जेंडर स्तरीकरण को कैसे बनाए रखा जाता है।

नारीवादी सिद्धान्तों के एक अन्य सर्वेक्षण में नीलसन (1990) ने उन्हें जीव-विज्ञान, सामाजिक शिक्षा, सामाजिक संरचना और समाजों की भौतिक परिस्थितियों पर ध्यान देने वाले सिद्धान्तों की श्रेणी में रखा है। जैसा कि हम जल्दी ही देखेंगे कि स्तरीकरण (stratification) की व्यवस्थाओं में

महिलाओं की स्थिति और इतिहास की गति को समझने में भौतिकवादी सिद्धान्त ज्यादा उपयोगी हैं। मगर हमारी विषयवस्तु के लिए दूसरे सिद्धान्तों का भी मिलाजुला इस्तेमाल ज्यादा बेहतर रहेगा। जहाँ तक जैव वैज्ञानिक सिद्धान्तों का सवाल है तो हम सिर्फ इतना दर्ज करेंगे कि महिलाओं और पुरुषों में महत्त्वपूर्ण शारीरिक भिन्नताएँ होती हैं और ऐसा लगता है कि मस्तिष्क से सम्बन्धित नई भिन्नताएँ लगभग रोज सामने आ रही है। मगर आधुनिक समाजों में जेंडर स्तरीकरण की हमारी विषयवस्तु के लिए इन सिद्धान्तों और आनुभविक निष्कर्षों की उपयोगिता निर्विवाद नहीं है। इस बात को तब और अच्छी तरह समझा जा सकेगा जब हम मानव समाज के उदय पर विचार करेंगे।

समाजीकरण और सीखने की प्रक्रिया पर ध्यान देने वाले जेंडर आधारित स्तरीकरण के सिद्धान्त हाल के दशकों में सबसे ज्यादा लोकप्रिय हुए हैं। और इस आशय के साक्ष्यों की कोई कमी नहीं है कि दुनियाभर के समाजों में लड़कियों को अपनी मातहत स्वीकार करने के लिए तैयार किया जाता है। इस किस्म के सबसे सम्मानित सिद्धान्त में से एक शोदोरोव (1998) का सिद्धान्त है। उन्होंने *दि रीप्रोडक्शन ऑफ मदरिंग* में नारीवादी और फ्रायडवादी सिद्धान्त को एक दूसरे के साथ जोड़ कर दिखाया है। उनकी कोशिश यह समझने में काफी मददगार है कि बहुत कम उम्र से ही किस तरह लड़कों और लड़कियों को बहुत बारीक तरीके से समाज में एक-दूसरे से भिन्न और असमान अवस्थितियों को स्वीकार करना सिखाया जाने लगता है। उदाहरण के लिए, इस सिद्धान्त का एक मुख्य तर्क है कि महिलाएँ लगभग हमेशा ही मातृत्व का जिम्मा सम्भालती हैं, इसीलिए लड़के और लड़कियाँ दोनों पहले खुद को एक स्त्री की छवि से जोड़कर ही देखते हैं। मगर, क्योंकि लड़कों को बाद में इस छवि को छोड़ना पड़ता है और उसके विपरीत धुरी पर जाना पड़ता है इसलिए वे हर उस चीज को हिकारत की नजर से देखने लगते हैं जो स्त्रियोचित होती है। इस तरह का सिद्धान्त महत्त्वपूर्ण तो है मगर कई ऐसे सवालों को भी जन्म देता है जिनका भौतिकवादी संघर्ष (material conflict) आधारित सिद्धान्तों के जरिए ही बेहतर जवाब दिया जा सकता है। मसलन, सवाल उठता है कि अगर ऐसा है तो मानव समाज के पूरे इतिहास में जेंडर असमानता का स्तर हमेशा बदलता क्यों रहा है और यहाँ तक कि आधुनिक औद्योगिक समाजों में भी इतनी विविधता क्यों दिखाई देती है, निश्चय ही इसके पीछे और भी वजहें रही होंगी। अकसर ही जेंडर असमानता की व्याख्याएँ किसी सीखने सम्बन्धित सिद्धान्त के ऊपर आकर ठहर जाती हैं, मानो संरचनात्मक परत हो ही नहीं और जेंडर असमानताओं के स्वरूप को प्रभावित करने में सामाजिक संस्थानों का कोई हाथ ही न हो। यहाँ संरचनात्मक स्तर से सम्बन्धित कुछ सिद्धान्तों पर विचार करना प्रासंगिक रहेगा।

संरचनात्मक प्रकार्यात्मक सिद्धान्त (Structural Functional Theories)

आज के ज्यादातर समाज वैज्ञानिकों के बीच इस बात पर कमोबेश सहमति होगी कि परम्परागत प्रकार्यात्मक सिद्धान्त महिलाओं के प्रति बहुत संवेदनशील नहीं रहे हैं या कम से कम इतने संवेदनशील तो नहीं रहे हैं कि वे उल्लेखनीय सामाजिक परिवर्तनों या बहुत कम जेंडर असमानता की सम्भावना खुली रख सकें। पारसन्स (Parsons, 1964; 423) के आधुनिक समाजों में सामाजिक स्तरीकरण के सिद्धान्त के अनुसार महिलाओं को पुरुषों के मुकाबले कमतर हैसियत ही मिलनी चाहिए। उनके अनुसार, सभी समाजों में परिवार केन्द्रीय संस्था रहा है और परिवार के भीतर जेंडर आधारित कड़ा श्रम विभाजन आवश्यक है। इस संस्थागत पूर्वापेक्षा के अनुसार, महिलाओं को परिवार के बाहर पुरुषों द्वारा निभाई जाने वाली सहायक भूमिकाओं की बजाय घर में रहकर अभिव्यक्तिपरक, सेवा वाली भूमिका निभानी चाहिए। इसके अलावा, अगर मर्द और औरतें बिल्कुल एक जैसी भूमिकाएँ निभाने लगेंगे तो उनके बीच प्रतिस्पर्धा पैदा होगी जो परिवार को छिन्न-भिन्न कर देगी (खासतौर से देखें, Parsons 1964:422 से 423)|

अध्याय 5 में हम सामाजिक स्तरीकरण के प्रकार्यात्मक सिद्धान्तों की मूल समस्याओं पर पहले ही विचार कर चुके हैं। समाजों को केवल सकल व्यवस्था के रूप में देखने और समाज में मौजूद संस्थानों को केवल पूरे समाज के हित के लिए संचालित मानने के आग्रह की वजह से ये सिद्धान्त परस्पर प्रतिद्वंदी हित रखने वाले समूहों की मौजूदगी से बेखबर हो जाते हैं, और यह नजरन्दाज करने से छूट जाते हैं कि किस तरह सत्ता-विभेद समाजों के संचालन, खासतौर से सामाजिक स्तरीकरण को समझने में मदद कर सकते हैं। यही बात परिवार और जेंडर भूमिकाओं की उनकी राय के बारे में कही जा सकती है। पार्सन्स के सिद्धान्त में यह बात सामने नहीं आती कि परम्परागत परिवार के भीतर उन्होंने सत्ताभेद की जो तस्वीर खींची है वह परिवार के एक सदस्य की कीमत पर दूसरे सदस्य को लाभ की स्थिति में पहुँचा सकती है। इसी बेपरवाही के चलते पार्सन्स कभी स्वीडन, जर्मनी और जापान जैसे समाजों के बीच जेंडर असमानता में पाए जाने वाले भारी फर्क की व्याख्या नहीं कर पाए।

टकराव का सिद्धान्त (Conflict Theories)

इस अध्याय की शुरुआत में हमने मानव समाजों में सामाजिक स्तरीकरण के इतिहास की समीक्षा की थी। अध्याय 3 में हमने मानव समाजों में सामाजिक स्तरीकरण के इतिहास की समीक्षा करते हुए लेस्की (1966; 1984) के चिन्तन का काफी सहारा लिया था जो खुद मानवशास्त्रियों में ऐतिहासिक भौतिकवादी परम्परा के आधार पर मानव समाज में सामाजिक स्तरीकरण के उद्‌गम की व्याख्या करते हैं। हाल के सालों में जेंडर असमानता के सबसे सम्मानित सिद्‌धान्त भी ऐतिहासिक भौतिकवाद परिप्रेक्ष्य का बहुत घनिष्ठता से पालन करते दिखाई देते हैं।

इनमें शाफेट्ज़ (Chafetz, 1984, 1988) के सिद्‌धान्त सर्वश्रेष्ठ सिद्‌धान्तों में से एक हैं। पूरे इतिहास में महिलाओं की स्थिति को समझने के लिए शाफेट्ज़ ने तीन चीजों पर जोर दिया है : काम का संगठन कैसा है, समाज में किस प्रकार की नातेदारी की व्यवस्था मौजूद है और जेंडर विषमता के लिए विचारधारात्मक समर्थन कितना है। इनमें से पहला आयाम इतिहास में विभिन्न प्रकार के समाजों के उदय की हमारी व्याख्या के नजदीक है। जैसा कि हम देख चुके हैं संग्राहक समाजों में काम का ढाँचा जेंडर समानता के लिए ज्यादा अनुकूल था जबकि शिकारी समाज में अनुकूलता नहीं थी। पहले सरल बागवानी और फिर ज्यादा उन्नत खेती से इतिहास में महिलाओं की अधीनता बढ़ती गई। उन्नत औद्‌योगिक समाजों के उदय के बाद ही काम के ढाँचे में इस तरह का बदलाव आया है कि जेंडर समानता की गुंजाइश पैदा हुई है। यहाँ जेंडर समानता की गुंजाइश ही सबसे महत्त्वपूर्ण शब्द है क्योंकि बाकी दोनों शक्तियाँ (नातेदारी व्यवस्था और जेंडर विषमता के लिए वैचारिक समर्थन की स्थिति) अभी भी जेंडर समानता पर अंकुश लगाने के लिए सक्रिय रह सकती हैं। यहाँ हमें नातेदारी व्यवस्था और किसी समाज में यह परम्परा किस तरह कायम रही है, इसको भी समझना चाहिए ताकि अतीत और वर्तमान की जेंडर असमानताओ को समझ सकें। उदाहरण के लिए, थाईलैण्ड की मातृ-स्थानिक (matrilocal) जिसमें विवाहित पुरुष अपनी पत्नी के घर आकर रहने लगते हैं) और एकवंशीय (यानी वंशावली को केवल पुरुष या स्त्री पूर्वजों की दिशा में ही ना देखा जाए) परम्पराओं को समझना जरूरी है ताकि यह जाना जा सके कि कोरिया जैसे दूसरे एशियाई समाजों के मुकाबले थाईलैण्ड में ज्यादा जेंडर समानता क्यों दिखाई देती है। इसी तरह, जापान के विपरीत अमरीका और अन्य उन्नत औद्‌योगिक देशों में तुलनात्मक रूप से कम जेंडर असमानता को दोनों किस्म के समाजों में प्रचलित नातेदारी व्यवस्था और महिलाओं की स्थिति को प्रभावित करने वाली विचारधाराओं के सन्दर्भ में ही समझा जा सकता है (Casper, McLanahan, and Garfinkel1994)।

सेन्डे (1981) के शोधों में भी कमोबेश इसी तरह का सिद्‌धान्त मिलता है जो 150 से ज्यादा समाजों की अध्ययन सामग्री पर आधारित है। पर्यावरण पर विशेष रूप से ध्यान देते हुए सेन्डे ने

पाया कि जब पर्यावरण (सामाजिक और भौगोलिक पर्यावरण) में ज्यादा जोखिम होता है और संसाधन कम सुरक्षित होते हैं तब पुरुषों के वर्चस्व की ज्यादा सम्भावना रहती है। कहने का मतलब यह है कि जैसा कि हमने देखा शिकार पर आश्रित समाज और बड़े पैमाने पर युद्ध में संलग्न समाजों में पुरुषों का प्रभुत्व अधिक होता है। पर्यावरण से जूझने के लिए बनाए गए आर्थिक संस्थानों के विकास के साथ-साथ समाज के लिए उपलब्ध मूलभूत वातावरण के आधार पर इस तरह की परम्पराएँ, नातेदारी व्यवस्थाएँ और विचारधाराएँ उभरती हैं कि वे समाज में जेंडर असमानता को और बल देने लगती हैं। दरअसल, सेन्डे (Sanday, 1981) का अधिकतर शोध 150 समाजों में उत्पत्ति की कहानियों के विश्लेषण पर आधारित है और इसके हिसाब से पर्यावरण तथा समाज में पुरुषों और महिलाओं की सापेक्ष स्थिति, दोनों का महत्त्व पता चलता है।

टकराव सिद्धान्तों की श्रेणी में हमें उन विविध नारीवादी सिद्धान्तकारों पर भी ध्यान देना चाहिए जो एक सामान्य संघर्ष परिप्रेक्ष्य को मानती हैं। सबसे पहले, उदार नारीवादी सिद्धान्तकार जेंडर असमानता को जेंडर भूमिकाओं के समाजीकरण और लैंगिक भेदभाववाद (sexism) में देखती हैं। उनका जोर इस बात पर रहता है कि पुरुषों के मुकाबले महिलाओं के लिए व्यक्तिगत अधिकार और स्वतन्त्रता कितनी सीमित है। इस धारा के प्रवर्तकों के अनुसार, महिलाओं से उम्मीद की जाती है कि वे मुख्य रूप से परिवार के निजी दायरे और घरेलू जिम्मेदारियों तक ही सीमित रहें, और लिहाजा उनका इन्हीं भूमिकाओं के लिए उनका समाजीकरण किया जाता है। इस प्रकार उन्हें शिक्षा, घर से बाहर जाकर काम करने और सार्वजनिक राजनीतिक सहभागिता करने के बराबर अवसर नहीं मिलते। क्योंकि आधुनिक विश्व में वास्तविक सत्ता सार्वजनिक दायरे की गतिविधियों में निहित होती है इसलिए इस सिद्धान्त में जेंडर समानता को बढ़ाने के लिए कानूनी और राजनीतिक माध्यमों से महिलाओं के लिए समान अधिकार और अवसर दिलाने की वकालत की जाती है। इसके लिए जेंडर भूमिका के लिए समाजीकरण और परम्परागत जेंडर भूमिकाओं से जुड़ी रूढ़िवादी सोच में बदलाव की भी आवश्यकता होगी। उदार नारीवादी परिपेक्ष्य की इस गलतफहमी के लिए भी आलोचना की जाती रही है कि महिलाओं के लिए समान अवसरों और अधिकाधिक व्यक्तिगत अधिकारों की उपलब्धि ही समानता के लिए पर्याप्त है। इसके आलोचकों का कहना है कि जब तक श्रम, शिक्षा और राजनीति जैसे संस्थानों को चलाने के तरीके में संरचनात्मक बदलाव नहीं आएँगे, तब तक जेंडर समानता सीमित रहेगी। उदाहरण के लिए, अगर सभी वयस्क महिलाएँ और पुरुष सुशिक्षित हों और आधुनिक औद्योगिक जगत में तरक्की करने के लिए लम्बी पालियों में काम करें तो फिर सभी देखभाल वाले कामों और घरेलू जिम्मेदारियों का क्या होगा?

आमूल परिवर्तनवादी नारीवादी विचारक पितृसत्तात्मक व्यवस्था को ही महिलाओं की अधीनता का आधार मानते हैं जो सार्वजनिक और निजी जीवन के सभी संस्थानों पर पुरुषों के वर्चस्व और नियन्त्रण से फलती-फूलती है, इसमें आर्थिक सत्ता व विशेषाधिकार और महिलाओं की यौनिकता व प्रजनन पर नियन्त्रण शामिल हैं। उनका कहना है कि महिलाओं और पुरुषों को महिलाओं की अधीनता को आत्मसात करने और महिलाओं की भूमिकाओं व योगदान को हिकारत की नजर से देखने की शिक्षा दी जाती है। इस मत के अनुसार जेंडर समानता के लिए जरूरी है कि ऐसी संस्थागत संरचनाओं को आमूल रूप से बदल दिया जाए जो पुरुषों को अहमियत देती हैं और साथ ही चेतना के स्तर पर बदलाव लाया जाए ताकि महिलाओं के साथ-साथ पुरुषों का भी सम्मान हो और पुरुष व महिला सम्बन्धों को एक ज्यादा समतापरक और लचीले ढंग से पुनर्निर्मित किया जाए। कुछ आमूल परिवर्तनवादी नारीवादी तो यहाँ तक मानती हैं कि समाज में महिलाओं के लिए किसी भी तरह की सत्ता तभी सम्भव है जब पुरुषों के साथ किसी भी तरह का सम्पर्क न हो।

मार्क्सवादी नारीवादियों की नजर में सम्पत्ति के निजी स्वामित्व पर आधारित पूँजीवादी व्यवस्था में निहित वर्गीय उत्पीड़न ही जेंडर असमानता की असली जड़ है। इस नजरिए के मुताबिक सम्पत्ति पर प्रभावी नियन्त्रण के चलते एकसंगी (monogamous) पितृवंशीय एवं पितृसत्तात्मक एकल पारिवारिक संरचना पर दबाव पड़ता है और पत्नियों और बच्चों पर पति/पिता का नियन्त्रण पैदा होता है, जो कि व्यक्तिगत सम्पत्ति अधिकारों के भी स्वामी होते हैं। मार्क्सवादी नारीवादियों के अनुसार महिलाएँ घर में श्रम और सेवाएँ मुहैया कराती हैं जिसके चलते पूँजीपतियों के लिए वेतनभोगी मजदूरों से ज्यादा से ज्यादा काम कराने की सम्भावना पैदा होती है। बहुत सारी महिलाएँ पूँजीपतियों के लिए आरक्षित मजदूर वर्ग का भी काम करती हैं जिसका जरूरत पड़ने पर इस्तेमाल किया जा सकता है। हाल में ही कुछ मार्क्सवादी नारीवादियों का तो यह भी कहना है कि विभिन्न सामाजिक वर्गों की महिलाएँ औपचारिक व अनौपचारिक मजदूरों के रूप में पूँजीवाद में अलग-अलग ढंग से समाहित होती हैं। इस सोच के मुताबिक, अगर वर्गीय उत्पीड़न से निजात मिल जाए तो जेंडर उत्पीड़न और असमानता का आधार ही नहीं रहेगा।

हाल ही में नारीवादियों में एक व्यापक समाजवादी नारीवादी परिप्रेक्ष्य भी सामने आया है। इस धारा के चिन्तकों का कहना है कि जेंडर उत्पीड़न पूँजीवाद के पहले से चला आ रहा है और महिलाओं का उत्पीड़न, पितृसत्ता और वर्गीय उत्पीड़न दोनों के समकक्ष है। इस सोच के मुताबिक जेंडर उत्पीड़न समाज में होने वाले विभिन्न प्रकार के उत्पीड़नों से जुड़ा हुआ है, जैसे कि, नस्ल, नृजातीयता, राष्ट्रीयता, यौन रुझान, विकलांगता आदि पर आधारित उत्पीड़न। इसका मतलब यह है कि अधिकाधिक जेंडर समानता केवल तभी सम्भव है जब यह संघर्ष समाज में सभी प्रकार के उत्पीड़न

से मुक्ति के संघर्ष का हिस्सा बन जाए। इस मत के अनुसार सभी मनुष्यों के लिए ज्यादा सन्तुलित और मानवीय जीवन सुनिश्चित करने के लिए ज्ञान, चेतना और सामाजिक संस्थानों के स्तर पर भी रूपान्तरण की आवश्यकता होगी। नारीवादी सिद्धान्त के ये नए बदलाव अमरीका और शेष दुनिया में महिलाओं की जिन्दगी की बहुलता के प्रति जागरूकता के बढ़ते अहसास से जुड़े हुए हैं। उदाहरण के लिए, महिलाओं की जिन्दगी सिर्फ उनके जेंडर से तय नहीं होती बल्कि स्थानीय समुदायों को प्रभावित करने वाले आर्थिक, सामाजिक, सांस्कृतिक और पर्यावरणीय मुद्दों से भी घनिष्ठ रूप से जुड़ी हुई है। लिहाजा, जेंडर समानता के लिए सिर्फ महिलाओं की कार्रवाईयाँ ही काफी नहीं है बल्कि कॉरपोरेट वैश्वीकरण, पारिस्थितिकीय विनाश, साम्राज्यवाद और नस्लवाद आदि के खतरों से जूझ रहे समुदायों और संस्कृतियों की रक्षा के लिए बहुत सारे अलग-अलग स्तरों पर कार्यवाही की जरूरत है।

जेंडर आधारित आय की असमानता पर वर्गीय प्रभाव

यहाँ हम जेंडर भेदभाव और असमानता के सिद्धान्तों से कुछ देर के लिए विदा लेते हैं। जैसा कि गरीबी पर केन्द्रित पिछले अध्याय में जिक्र किया गया था, गरीबी के कारणों के विशिष्ट सिद्धान्तों के बावजूद किसी देश में लोगों की गरीबी को काफी हद तक उस देश में वर्ग व्यवस्था के मानक क्रिया विधान से ही समझा जा सकता है। इसी तरह, जेंडर आधारित पक्षपात या उत्पीड़न के इन सिद्धान्तों में से चाहे कोई सा ज्यादा सटीक या उपयोगी हो, स्तरीकरण सिद्धान्त का एक मुख्य तर्क अकसर उपेक्षित रह जाता है। इस तर्क के अनुसार किसी खास समाज में सामाजिक स्तरीकरण की व्यवस्था के भीतर जो सबसे महत्त्वपूर्ण वर्गीय श्रेणियाँ होती हैं उनके द्वारा जेंडर असमानता जारी रहती है। (Ferry and Hall 1996)। कहने का मतलब यह है कि नि:सन्देह पुरुषों और महिलाओं के बीच आय की असमानता को अधिकांशतः हमारे समाज में महिला विरोधी लैंगिक भेदभाववाद और पक्षपात की ऐतिहासिक परिस्थितियों का परिणाम माना जा सकता है (England et al. 1998; England and Farkas 1986)। नस्लवाद की तरह, जैसा कि हम आगे देखेंगे, जब लैंगिक भेदभाववाद एक बार स्थापित हो जाता है तो यह जेंडर भेदभाव अधिकांशत: स्थापित वर्ग व्यवस्था के जरिए काम करने लगता है (Wright 1997: Chapter 9; Ferree and Hall 1996)।

पिछले अध्यायों में जिन अध्ययनों का जिक्र किया गया था उनको देखकर पता चलता है कि व्यवसायिक कौशल के स्तर के अलावा सामान्य तौर पर आय की असमानता इस बात से भी जुड़ी

हुई है कि सत्ता की संरचना में किसकी क्या स्थिति है, उत्पादन साधनों का किसका स्वामित्व है, कौन सहायक और कौन केन्द्रीय रोजगारों में है, यूनियनों की स्थिति कैसी है। लिहाजा अगर हमें आय की असमानता को सामान्य तौर पर प्रभावित करने वाले इन अन्य कारकों में जेंडर भेद दिखाई देता है तो इसका मतलब है कि हमने वर्ग व्यवस्था के जरिए काम करने वाली इस जेंडर असमानता के अन्य स्रोतों को पहचान लिया है। कई अध्ययन इस बात की पुष्टि करते हैं।

अध्याय 2 में हम पहले ही देख चुके हैं कि श्वेत पुरुषों के मुकाबले महिलाओं और अल्पसंख्यकों को प्रायः कमतर हैसियत के व्यवसाय अपनाने पड़ते हैं। लिहाजा, चाहे जो भी वजह हो, व्यवसाय की संरचना में उच्चतर पदों से बाहर छूट जाने पर आय और अन्य प्रकार की असमानताएँ अनिवार्य रूप से पैदा हो जाती हैं। लेकिन अध्याय 2 में तालिका 2 -3 के आधार पर हम यह भी देख चुके हैं कि जब महिलाओं के पास पुरुषों वाली ही व्यवसायिक हैसियत और शिक्षा होती है तब भी उनकी आमदनी पुरुषों से कम रहती है। इस स्थिति को समझने के लिए हमें राइट द्वारा बताई गई वर्गीय श्रेणियों को देखना चाहिए जिनका अध्याय 5 में जिक्र किया गया था (Wright 1997; Wright 1978a, Wright 1978b; Wright and Perrone 1970; Wright et al. 1982; Wright and Martin 1987)।

सत्ता की स्थिति के लिहाज से वर्ग के नस्लीय और जेंडर आधारित श्रेणी विभाजन पर विचार करते हुए तालिका 10-10 में यह दिखाया गया है कि राइट द्वारा दी गई मजदूर वर्ग या अकुशल कामगारों की श्रेणी में अश्वेत पुरुषों, श्वेत महिलाओं और अश्वेत महिलाओं के पाए जाने की सम्भावना दूसरे समूहों के मुकाबले ज्यादा रहती है। (Wright 1997: 68; Wright and Perrone 1977; Wright et al. 1982, Robinson and Kelley 1979)। अश्वेत और श्वेत महिलाओं के मामले में यह नियम और भी स्पष्ट दिखाई देता है क्योंकि मजदूर वर्ग की श्रेणी में लिपिकीय और सेवा क्षेत्र के कामगार भी शामिल हैं। ऐसे में इस पायदान के शिखर पर हमें श्वेत पुरुष सबसे ज्यादा दिखाई देते हैं और जैसे-जैसे हम तालिका 10-10 में नीचे जाने लगते हैं महिलाओं और अश्वेतों की संख्या बढ़ने लगती है। कई अध्ययनों से पता चलता है कि महिलाओं और अल्पसंख्यकों की कम आमदनी के पीछे उनके सीमित अधिकारों और सीमित स्वामित्व का मुख्य हाथ होता है (Wright and Perrone 1997; Wright 1997; Kluegel 1978; Wright 1978b, 1979; Wolf and Fligstein 1979; Treiman and Roos 1993)। अध्याय आठ में हमने यह भी पाया था कि दोहरी अर्थव्यवस्था में केन्द्रीय या हाशिए की स्थिति से रोजगार सुरक्षा, पदोन्नति और आय असमानता, सभी पर असर पड़ता है। कई अध्ययनों से इस बात की पुष्टि की गई है कि महिलाओं और अल्पसंख्यकों की आमदनी कम होती है, इसका कारण कुछ हद तक यह है कि

उनकी संख्या हाशियाई उद्योगों में ज्यादा है (Beck, Horan, and Tolbert 1978; Tolbert, Horan, and Beck 1980; Kaufman 1983)। अन्त में, दोहरी अर्थव्यवस्था सम्बन्धी शोधों से यह भी पता चलता है कि यूनियन से जुड़ाव महिलाओं व अल्पसंख्यकों की कम आमदनी का एक अहम कारण है। कई अध्ययनों ने प्रत्यक्ष रूप से दिखाया है कि महिलाएँ और अल्पसंख्यक प्रायः ऐसे उद्योगों में काम कर रहे होते हैं, जहाँ यूनियनें नहीं हैं (Beck, Horan, and Tolbert 1980)।

तालिका 10-10

नस्ल और लिंग के अनुसार राइट की वर्ग श्रेणियाँ (स्वामित्व, प्राधिकार तथा कौशल)

	श्वेत		अश्वेत	
	पुरुष	महिलाएँ	पुरुष	महिलाएँ
1. पूँजीपति	3.0%	0.7%	0.0%	0.0%
2. छोटे नियोक्ता	8.2	4.9	0.0	1.3
3. पैटी बुर्जुवा/छोटे व्यवसायी	6.4	8.8	3.6	0.0
कुल स्वरोजगारी	17.6	14.4	3.6	1.3
4. विशेषज्ञ प्रबन्धक	8.5	2.8	5.1	0.0
5. कुशल प्रबन्धक	5.7	2.4	2.0	0.0
6. अकुशल प्रबन्धक	2.3	3.9	1.0	6.3
7. विशेषज्ञ सुपरवाइजर	4.2	1.7	1.3	1.7
8. कुशल सुपरवाइजर	7.9	4.3	7.5	2.0
9. गैर-कुशल सुपरवाइजर	5.0	9.3	4.6	7.7
10. विशेषज्ञ	3.2	3.5	2.9	1.8
11. कुशल कामगार	17.4	7.7	23.3	10.9
12. गैर-कुशल कामगार	28.2	50.0	47.7	68.4

स्रोत : 1997:68

मगर कई दूसरे अध्ययन बताते हैं कि सरल भेदभाव जैसे ज्यादा परम्परागत कारक आय में असमानता का प्रमुख कारण हैं। ये अध्ययन सत्ता की स्थिति, नौकरी की अवधि, शैक्षिक स्तर आदि सारे आयामों पर ध्यान देते हैं जो जेंडर और नस्लीय आय असमानता की वजह हो सकते हैं। इसके बावजूद जो आय असमानता दिखाई देती है उसको नस्लवाद और लैंगिक भेदभाववाद से ही जोड़कर देखा जा सकता है (England et al.1988; Parcel and Mueller 1989; Wellington 1994; Waldfogel 1997)। एक विस्तृत अध्ययन में दिखाया गया है कि जिन नौकरियों को 'औरतों का काम' माना जाता है, वे शैक्षिक स्तर, व्यावसायिक कौशल, अधिकार और आय प्राप्ति से जुड़े दूसरे कारकों की मौजूदगी के बावजूद कम आमदनी वाली होती हैं (McLaughlin 1978; Bellas1994)।

अन्य अध्ययनों में पाया गया है कि जब पुरुष और महिलाएँ एक ही नौकरी करते हैं तो भी महिलाओं को अकसर अलग पदनाम और कम तनख्वाह मिलती है (Bielby and Baron 1986; Peterson and Morgan 1995)| एक विशाल अध्ययन में मेरीनी और फेन (1997) ने पाया कि लोगों की पहली नौकरी की तनख्वाह में जो जेंडर भेद दिखाई देते हैं उनमें से लगभग आधे महिलाओं की व्यक्तिगत विशिष्टताओं या मानव पूँजी चरांक जैसे शिक्षा का स्तर, नौकरी का कौशल और आकांक्षाओं से निर्धारित होते हैं। इसके विपरीत महिलाओं को प्राथमिकता न देने वाले रोजगार नेटवर्क और विभिन्न निगमों की विशेषताएँ और कार्य प्रणालियाँ भी महिलाओं की आय में लगभग 40% फर्क का कारण बनते हैं।

इस बात के कुछ संकेत दिखाई देते हैं कि भविष्य में ये जेंडर असमानताएँ और भी कम हो जाएँगी। उदाहरण के लिए, जैसा कि हम देख चुके हैं ऐसे पदों पर महिलाओं की संख्या में उल्लेखनीय वृद्धि हुई है जिन्हें परम्परागत रूप से पुरुषों की नौकरियाँ माना जाता था। सम्भवतः इससे भी ज्यादा महत्त्वपूर्ण बात यह है कि कॉलेजों में पढ़ रही महिलाएँ अध्ययन के लिए जो विशेष विषय चुन रही हैं वे पहले के मुकाबले बहुत भिन्न हैं। अब महिलाएँ केवल शिक्षाशास्त्र, घरेलू अर्थशास्त्र, मनोरंजन या सामाजिक कार्य में डिग्री के लिए नहीं पढ़तीं। बहुत सारी महिलाएँ अब कानून, चिकित्सा, इंजीनियरिंग, लेखांकन और ऐसे दूसरे विषयों में भी मजबूती से दाखिल हो रही हैं, जिनको पहले पुरुषों का क्षेत्र माना जाता था।

दूसरी तरफ यह भी साफ दिखाई देता है कि अभी सत्ता की संरचना में केवल सीमित सुधार ही आए हैं। महिलाओं और अल्पसंख्यकों के प्रसंग में इस तरह की सीमाओं को अदृश्य अवरोध या 'ग्लास सीलिंग' की अवधारणा के जरिए व्यक्त किया जाता रहा है। इस अवधारणा का मतलब यह है कि भले ही महिलाओं और अल्पसंख्यकों की स्थिति व्यावसायिक हैसियत के लिहाज से सुधर रही हो और भले ही वे महत्त्वपूर्ण शासकीय और कॉर्पोरेट नौकरशाही के ज्यादा सत्तावाले पदों पर पहुँच रहे हों, पर वे इन सत्ता-संरचनाओं के शिखर तक अभी भी नहीं पहुँच पाते– इस तरह, एक बिन्दु के बाद एक अदृश्य रुकावट आ जाती है जिसके पार वे नहीं जा सकते हैं।

यहाँ हम दुनिया भर के प्रमुख देशों में सामाजिक स्तरीकरण पर राइट (1997) द्वारा किए गए विशाल शोध का सहारा ले सकते हैं जिसमें इस अदृश्य अवरोध के प्रभावों के बड़े पुख्ता साक्ष्य मिले हैं। तालिका 10-11 से पता चलता है कि विभिन्न विशाल संस्थानों में सत्ता के विभिन्न पदों पर पुरुषों और महिलाओं की क्या संख्याएँ हैं। सबसे ऊँचा सत्ता पद शीर्षस्थ प्रबन्धक (मैनेजर) का होता

है, फिर उच्च प्रबन्धक (अपर मैनेजर), फिर सुपरवाइजर और अन्त में गैर प्रबन्धकीय पद आते हैं। जैसा कि आप तालिका 10-11 में देख सकते हैं, डेटा समूह में दिए गए सातों औद्योगिक देशों में एक जैसा रुझान दिखाई देता है; महिलाओं की संख्या गैर प्रबन्धकीय पदों पर ज्यादा और उच्चतर प्रबन्धकीय पदों पर कम होती जाती है। दूसरे समाजों की महिलाओं से तुलना करने पर अमरीकी महिलाओं की स्थिति थोड़ी बेहतर है और वे उच्चतर प्रबन्धकीय पदों पर कुछ अधिक संख्या में तो हैं, मगर यह फर्क बहुत थोड़ा सा ही है।

यहाँ अब एक अन्तिम महत्त्वपूर्ण विषय बच जाता है, जो अमरीका जैसे औद्योगिक समाजों की वर्गीय संरचना में महिलाओं और अन्य अल्पसंख्यकों की स्थिति से सम्बन्धित है– उनके सामने सामाजिक व्यवस्था में ऊपर उठने की सम्भावनाएँ ओर बन्दिशें कैसी हैं? यहाँ एक बार फिर हम पाएँगे कि नस्लवाद, लैंगिक भेदभाववाद और भेदभाव के परम्परागत स्रोत मौजूदा वर्गीय श्रेणियों के जरिए ही सक्रिय रहते हैं। मगर इससे पहले कि हम महिलाओं और अल्पसंख्यकों के लिए इन स्थितियों पर विचार करें, हमें अध्याय 12 में सामाजिक गतिशीलता और हैसियत प्राप्ति के सवाल पर एक व्यापक स्तर पर विचार करना होगा।

सारांश

जेंडर और यौन अन्तरों की बुनियादी परिभाषाओं का विवेचन करने के बाद यह अध्याय अमरीका में महिलाओं के लिए असमानता के स्तरों से सम्बन्धित सूचनाओं के साथ शुरू हुआ था। हालाँकि हमने पाया कि अमरीका में जेंडर-आधारित असमानता में कुछ कमी आई है मगर अब भी यह असमानता बहुत ज्यादा है। और जहाँ तक जेंडर आधारित आय की असमानता में कमी का सवाल है, तो हमने पाया पुरुषों व महिलाओं के बीच आय की असमानता में गिरावट मुख्य रूप से इसलिए आई है क्योंकि हाल के सालों में पुरुषों की आय गिरती जा रही है। तुलनात्मक जेंडर आधारित असमानताओं के लिहाज से हमने पाया कि अमरीका में असमानता आज के ज्यादातर दूसरे समाजों के मुकाबले कम मगर बहुत सारे औद्योगिक देशों में कहीं ज्यादा है।

तालिका 10-11

प्रबन्धकीय पदों पर पुरुषों और महिलाओं से सम्बन्धित सापेक्ष आँकड़े

	शीर्ष प्रबन्धक		उच्च प्रबन्धक		मध्य प्रबन्धक		निम्न प्रबन्धक		सुपरवाइज़र		गैर-प्रबन्धकीय		एन	
	पुरुष	महिलाएँ	पुरुष	महिलाएँ	पुरुष	महिलाएँ	पुरुष	महिलाएँ	पुरुष	महिलाएँ	पुरुष	महिलाएँ	पुरुष	महिलाएँ
	%	%	%	%	%	%	%	%	%	%	%	%	%	%
सं.रा. अमरीका	3.3	2.8	4.5	1.5	5.7	3.6	3.3	2.2	20.7	15.9	62.4	74.1	622	539
ऑस्ट्रेलिया	3.0	1.9	5.9	2.1	8.7	4.1	2.4	2.6	30.3	29.1	49.6	60.1	492	419
ब्रिटेन	3.9	0.9	1.2	0.2	8.6	1.8	4.9	1.1	20.2	18.4	61.3	77.6	594	456
कनाडा	3.7	0.9	5.2	0.9	5.4	3.0	2.3	2.0	18.9	11.9	64.6	81.2	785	639
स्वीडन	1.9	1.0	2.3	0.0	6.2	1.7	4.9	2.6	18.8	11.1	65.9	83.7	531	416
नार्वे	5.0	0.9	5.5	0.9	5.1	0.5	0.5	0.2	23.4	8.3	60.6	89.3	822	581
जापान	1.2	0.0	4.3	0.0	2.8	0.0	1.6	0.0	37.2	3.5	53.0	96.5	253	173

स्रोत : राइट (1997-337) में दिए गए आँकड़े।

दुनिया में और अमरीका में जेंडर असमानता की व्यापक ऐतिहासिक चर्चा के बाद यह अध्याय जेंडर असमानता के मुख्य सिद्धान्तों पर पहुँचा। हमने संरचनात्मक प्रकार्यात्मक और टकराव सिद्धान्त सहित जेंडर असमानता सिद्धान्त के नए-नए सिद्धान्तों का सार-संकलन प्रस्तुत किया। इसके बाद हमने इस बारे में चर्चा की कि आज उन्नत औद्योगिक देशों में जेंडर असमानता किस हद तक वर्ग के आधारभूत आयामों के जरिए सक्रिय है।

###